International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2025; 2(4): 44-46
© 2025 IJMH
www.themultijournal.com

Received: 23-07-2025
Accepted: 29-07-2025
Publish : 02-08-2025

दीप्ति डिगल
पीएच्. डी. शोधार्थी,
रमादेवी महिला विश्वविद्यालय,
विद्याविहार, भुवनेश्वर, ओडिशा

Correspondence:
दीप्ति डिगल
पीएच्. डी. शोधार्थी,
रमादेवी महिला विश्वविद्यालय,
विद्याविहार, भुवनेश्वर, ओडिशा

मराठी संत कवि और भक्ति आंदोलन

दीप्ति डिगल

मध्यकालीन समय में हिन्दू, जैन, बौद्ध, पारसी, यहूदी, ईसाई आदि धर्म प्रमुख थे। जनसाधारण के विश्वास की ईंट से धर्म का यह भवन तैयार हुआ था। लोक धर्म की निष्ठा और उसका धर्माचार परंपरागत और चमत्कार से प्रभावित था। ध्यान यदि आदिवासियों पर आकृष्ट करें तो उनका धर्म सीमित था, केवल उन्हीं तक। यही कारण है कि उन दिनों हिन्दू और इस्लाम यह दो ही प्रधान धर्म थे। जैन धर्म का प्रचार पश्चिम दक्षिण के क्षेत्र में अधिक था, वहीं बौद्ध धर्म पूर्वी प्रांतों में फैला हुआ था। इस्लाम धर्म के संपर्क में आकर हिन्दू धर्म व्यक्तिगत साधना के केंद्र से उभर कर सामूहिक साधना का रूप धारण करने लगा। इसमें आंदोलनकारी प्रवृत्तियाँ बढ़ने लगीं। इसी कारण सभी धर्मों में युगों के अनुरूप तथा स्थिति के अनुसार पंथों, संप्रदायों, उपसंप्रदायों की सृष्टि होने लगी। इन सभी का मुख्य उद्देश्य आत्म निरीक्षण और परिस्थिति का परीक्षण कर सुधार लाना था। ऐसा करने का कारण था परंपरागत आचार विचार को किसी न किसी रूप में जीवित रखना।

सुनहु मानुस भाइ।
सवार उपरै मानुस सत्तो,
ताहर उपरै नाहि।।

भक्ति आंदोलन भारतीय सांस्कृतिक इतिहास का सबसे व्यापक आंदोलन था। जन जीवन पर भक्ति आंदोलन का प्रभाव काफी गहरा पड़ा था। समाज के विभिन्न क्षेत्रों में इस आंदोलन का प्रचार प्रसार हुआ जिसकी शुरुआत दक्षिण में हुई। दक्षिण से आरंभ हुआ यह आंदोलन अखिल भारतीय चरित्र में व्यापक स्तर तक पहुँचा था। उत्तर भारत में भक्ति आंदोलन का प्रभाव इतना पड़ा कि उससे हिन्दी भक्ति साहित्य का विकास हुआ। इसी आंदोलन के आधार पर अनेक महान संत एवं कवियों का भी विस्तार हुआ। इन संतों की वाणी भक्ति कविता के रूप में हिन्दी साहित्य की एक समृद्ध परंपरा का निर्माण करने में कायम रही।

❖ भक्ति आंदोलन का प्रभाव

भक्ति आंदोलन जितनी राजनीति से प्रभावित थी उससे कहीं अधिक सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितियों से प्रभावित थी। इस आंदोलन के आरंभिक चरण में संतों के सामने सामाजिक व्यवस्थाएँ सबसे बड़ी चुनौती बनकर खड़ी थी। इसका पर्याय जाति व्यवस्था से है। उन दिनों हिन्दू धर्म कर्मकांडों के जकड़ में आ चुका था, जिसमें जाति व्यवस्था सबसे क्रूर था। ब्राह्मण वर्ग समाज में उच्च स्थान पर थे और शूद्रों को सबसे निचले स्तर पर रखा गया था। सामाजिक तौर पर जहाँ एक ओर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अच्छा संपर्क दिखता था, वहीं धार्मिक तराजू में दोनों कहीं भी बराबर नहीं थे। निःसंदेह तौर पर यही कारण है कि आचार्य शुक्ल ने भक्ति के आरंभ को इस्लाम का प्रभाव माना है। उनका यह विचार पूर्णतः झुठलाने योग्य है। उनका सारा ध्यान तत्कालीन स्थिति पर ही सीमित रहा। जिस प्रकार आदिकाल में उन्होंने केवल रासो तथा वीरपरक साहित्य को देखा और नाथ साहित्य, संत काव्य, सिद्ध साहित्य आदि को फुटकल कहकर हाशिए पर रखा, इसी प्रकार आगे चलकर भक्ति काल के उदय को लेकर भी उनकी यह संकीर्ण दृष्टि साफ देखने को मिलती है। शुक्ल जी के इतिहास दृष्टि पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने एक अन्य मत रखकर आलोचना प्रस्तुत की है- *"मैं जोर देकर कह सकता हूँ कि अगर इस्लाम नहीं भी आया होता तो भी इस(हिन्दी) साहित्य का बारह आना वैसा ही होता जैसा आज है।"*

भक्ति आंदोलन की शुरुआत सर्वप्रथम दक्षिण भारत में हुई थी। आगे चलकर इसका विकास भारत के कई क्षेत्रों में देखने को मिला। 13वीं 14वीं सदी में महाराष्ट्र के संतों ने भक्ति आंदोलन के इस प्रवाह को आगे बढ़ाया। महाराष्ट्र के निर्गुण संतों ने भक्ति आंदोलन को नए सिरे प्रदान किए। 17वीं सदी में संत तुकाराम एवं गुरु रामदास (शिवाजी के गुरु) ने भक्ति आंदोलन को जनता के बीच प्रस्तुत किया। महाराष्ट्र के इस भक्ति आंदोलन में सगुण निर्गुण विवाद कहीं था ही नहीं। इसी प्रकार आगे चलकर बंगाल में चंडी दास से लेकर श्री चैतन्य तक, सभी ने मनुष्य मात्र की समानता पर जोर दिया और साथ ही वैष्णव भक्ति को मजबूत किया।

❖ निर्गुण संत कवियों का काव्यादर्श

भक्ति काव्य में निर्गुण भक्ति कालक्रम की दृष्टि से पहले स्थान पर आता है। निर्गुण कवियों ने ईश्वर को निराकार रूप में अनुभव किया। वस्तुतः भक्ति आंदोलन का आरंभ भी निर्गुण संतों ने किया था जिन्होंने जाति-वर्ण विभाजित समाज में सामाजिक अन्याय और प्रताड़ना के शिकार होने वाले लोगों के बीच एक आशा की ज्योती जगाई। अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, धार्मिक आडंबर तथा धार्मिक कट्टरता के विरुद्ध निर्गुण संतों ने आवाज़ उठाई। भक्ति आंदोलन को इन्हीं संतो ने सामाजिक क्रांति का रूप दिया। निर्गुण संतों ने निर्गुण ब्रह्म की उपासना पर बल दिया है। साधारण जन को निर्गुण नाम का सहारा देकर इन कवियों ने लोक में सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया।

निर्गुण संतो के लिए भक्ति अपने जीवन की सुख शांति के लिए ईश्वर की शरणागति बिल्कुल नहीं है। व्यक्तिगत जीवन में कुछ हासिल करना इन संतों का उद्देश्य कभी था ही नहीं। उनकी भक्ति में श्रद्धा और प्रेम तत्व की प्रधानता है। ईश्वर से प्रेम का मतलब उनकी दृष्टि में लोक से प्रेम है। अहं का नाश होते ही भक्त और भगवान का अंतर मिट जाता है। अहं का यह नाश कठिन कार्य है, इसलिए भक्ति मार्ग भी बहुत कठिन मार्ग है। इस विषय पर संत कबीर दास लिखते हैं –

लंबा मारग, दूरी घर, विकट पंथ बहुमार।
कहो संतो क्यों पाइए, दुर्लभ हरि दिगार।।

संत कवि निर्गुण निराकार ईश्वर को मानते हैं। उनके लिए राम अवतार लेकर धरती पर आने वाले ईश्वर का रूप नहीं है। यही अवतार का अंतर हमें तुलसीदास के राम और कबीर के राम में देखने को मिलता है। तुलसी के राम अवतारी हैं और कबीर के राम ब्रह्म स्वरूप, अगम, अगोचर, जन्म-मरण से परे हैं।

शंकराचार्य के अद्वैतवाद में कहा गया है कि- *"आत्मा और परमात्मा में कोई मूल अंतर नहीं है। दोनों के मध्य की दूरी का कारण है माया का आवरण।"* कबीर आदि संत भी माया के आवरण के इसी रूप पर अपने विचार रखते हुए मानते हैं कि जिस दिन यह आवरण हट जाएगा, उसी दिन आत्मा और परमात्मा का एकीकरण संभव होगा। आत्मा और परमात्मा की इसी साधना प्रक्रिया को रहस्यवाद कहा जा सकता है।

जल में कुंभ, कुंभ में जल, बाहिर भीतर पानी।
फूटा कुंभ, जल ही समाना, यहु तत कहे ज्ञानी।।

❖ मराठी संत और भक्ति आंदोलन

भारत मात्र कृषि प्रधान देश नहीं, अपितु एक तीर्थ प्रधान देश भी है। यहाँ असंख्य तीर्थ स्थल हैं। अनेकानेक पर्वत, नदी, जलकुंड, तपोवन, पीठ, धाम आदि देश के कोने कोने में समाए हैं। उन तीर्थ स्थलों में प्राय: समय समय पर समस्त देश के रमता योगी साधु संत का समागम और समारोह होता रहता है।

सदियों से महाराष्ट्र भारतीय संस्कृति और धर्म का प्रमुख केंद्र रहा है। यह संतों की भूमि है। जिस भक्ति आंदोलन का आरंभ दक्षिण भारत में हुआ था, उस आंदोलन का संपूर्ण भारत में प्रचार प्रसार करने में महाराष्ट्र के निर्गुण संतों का बहुत बड़ा योगदान रहा है। उन दिनों कट्टर पुराण पंथ्यों ने महाराष्ट्र के उन संतों का भरपूर विरोध किया जिन्होंने दक्षिण भारत से आए भक्ति आंदोलन की लहर को आगे बढ़ाने में अपना योगदान दिया। उनके इन प्रयासों के बावजूद महाराष्ट्र के निर्गुण संतों ने हार नहीं मानी। अंततः भक्ति आंदोलन को ऐसे छोटे-मोटे विरोध दवा नहीं सके। इस आदोंलन में महाराष्ट्र के निर्गुण संतो को काफी कष्ट झेलना पड़ा। भक्ति आंदोलन की शुरुआत ही निम्न वर्ग की जनता ने की थी। वह शुरू से अंत तक मानव सत्य की घोषणा करते रहे हैं। भक्ति आंदोलन के आलोक में जाति एवं धर्म के परिप्रेक्ष्य में हो रहे भेदभाव का विरोध कर मानवता को सबसे ऊपर रखा गया। भक्ति आंदोलन की सबसे बड़ी उपलब्धि यही है कि उसने संपूर्ण भारत को एक सांस्कृतिक सूत्र में जोड़ दिया था। शिक्षित से लेकर अशिक्षित, हिन्दू से लेकर मुसलमान सभी एक हो चुके थे। महाराष्ट्र के निर्गुण संतो की बदौलत ही यह विचार ऐसे आदर्श उत्तर पूर्वी भारत में जोरों शोरों से बढ़ रहा था। उन संतों में संत तुकाराम एवं गुरु रामदास का एक महत्वपूर्ण योगदान रहा। उन्होंने जनता के बीच रहकर भक्ति आंदोलन के पक्ष को प्रस्तुत किया। उनके विचारों में सगुण और निर्गुण का भेद कहीं था ही नहीं। उनका मूल उद्देश्य था मनुष्य जाति को ऊपर रखकर मानव सत्य की घोषणा करना।

महाराष्ट्र के प्रमुख संतों और भक्ति आंदोलन के कवियों में से एक **संत तुकाराम** का जन्म महाराष्ट्र राज्य के पुणे जिले में स्थित 'देहू' नामक गांव में सन् 1598 में हुआ था। इनके पिता का नाम 'बोल्होबा' और माता का नाम 'कनकाई' था। संत तुकाराम के अतिरिक्त **गुरु रामदास** का भी नाम सर्वोपरि है। गुरु रामदास महाराष्ट्र के शूरवीर योद्धा शिवाजी राव के गुरु थे। उन्होंने भी भक्ति आंदोलन के पर्याय को आम जनता के बीच प्रस्तुत करने में अपना सर्वस्व न्योछावर किया। उनके आदर्श में भेदभाव का कोई स्थान नहीं था। यही कारण है कि उनके विचार में सगुण निर्गुण जैसे कोई

मत थे ही नहीं। उनका एकमात्र लक्ष्य था जनता के बीच हो रहे मतभेदों का नाश करना।

दक्षिण भारत से जिस भक्ति को रामानंद लाए थे उसमें जाति वर्ण व्यवस्था का विरोध था। जिस भावना का प्रचार कबीर आदि निर्गुण संतों ने उत्तर भारत में किया। उत्तर भारत में आने से पूर्व भक्ति का यह प्रवाह मराठी संतो द्वारा प्रसारित हुआ। मराठी संतों ने एक व्यापक सीमा तक भक्ति आंदोलन के आधार पर सामाजिक कुरीतियों, अमानवीय व्यवस्था तथा शोषण चक्र के विरुद्ध विशेष प्रक्रिया का प्रारंभ किया। भक्ति आंदोलन में संतों की अखिल भारतीय भूमिका को स्पष्ट करते हुए प्रगतिशील आलोचक 'मुक्तिबोध' लिखते हैं कि- *"पहली बार शूद्रों ने अपने संत पैदा किए। अपना साहित्य और गीत सृजन किया। कबीर, रैदास, नाभा, सेना आदि महापुरुषों ने ईश्वर के नाम पर जातिवाद के विरुद्ध आवाज बुलंद की।"*

❖ निष्कर्ष

अकथ कहानी प्रेम की, कछु कहि न जाए।
गूंगे केरी बरकरार, खाए और मुस्काए।।

भक्ती ह्रदय की प्रवृत्ति है। इसका मार्ग आध्यात्मिक है। ईश्वर से एकात्मक ही इसका एकमात्र लक्ष्य है सारांश में यही कह सकते हैं की प्रेम की सुखानुभूति इस भक्ति में देखने को मिलती है, जिसका सिर्फ भावन किया जा सकता है। भक्ति आंदोलन को व्यापक जन समुदाय तक पहुँचाने में मराठी संत कवियों का अहम योगदान रहा है। सामाजिक अस्थिरता के युग में उन्होंने सामान्य भक्ति मार्ग पर चलते हुए प्रेम, अहिंसा और समानता के आधार पर सामाजिक समरसता की स्थापना की। संत कवियों ने लोक भाषा में भी क्रांतिकारी साहित्य की रचना करने का एक अविश्वसनीय कदम उठाया। इन सभी तथ्यों से एक बात स्पष्ट है कि संत कवियों के लिए उनका लक्ष्य आम जन-जीवन तक अपनी बात को पहुँचना था। यही कारण है कि उन्होंने जनसाधारण के बोलचाल की भाषा को साहित्य की भाषा में बदलने का प्रयास किया। मराठी संत काव्य में इसी सामान्य भाषा का प्रयोग देखने को मिलता है, जिसका आदर्श मानव सत्य है।

सहायक ग्रंथ सूची

1. **हिन्दी साहित्य का इतिहास** - डॉ. नगेन्द्र – मयूर बुक्स, 4226/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002
2. **महाराष्ट्र के संतों का हिन्दी काव्य** – प्रभाकर सदाशिव पण्डित , प्रकाशक – उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ, प्रकाशन वर्ष -1991, मूल्य – 270 रूपए
3. **हिन्दी और मराठी निर्गुण संत काव्य** – प्रभाकर माचवे, प्रकाशक – चौखम्भा विद्या भवन, वारानसी, प्रकाशन वर्ष – 2018, मूल्य – 525 रूपए
4. **हिन्दी साहित्य का इतिहास** – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – श्री प्रकाशन, 1700, कूँचा दानी राय, दरियागंज, नई दिल्ली - 110002
5. **हिन्दी भाषा एवं साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास** – सरस्वती पाण्डेय, गोविंद पाण्डेय – अभिव्यक्ति प्रकाशन, 847/995, विश्वविद्यालय मार्ग, इलाहाबाद - 211002